अपीलीय सिविल

*न्यायमूर्ति गुरदेव सिंह के समक्ष*

गुरदीप काक्सजेआर,-अपीलकर्ता

*बनाम*

केहर सिंह और अन्य, -प्रतिवादी

## S A-O- No. 21 of 1968

17 जुलाई 1969

*सिविल प्रक्रिया संहिता*(1908 का 5) - आदेश 6 नियम 17 - लागत के भुगतान पर अभिवचनों में संशोधन - कब अनुमति नहीं दी जानी चाहिए - आंशिक पूर्व-मुक्ति के लिए मुकदमा - परिसीमा अवधि के बाद वाद में संशोधन - क्या अनुमति दी जानी चाहिए - मामले में विवेक अभिवचनों में संशोधन की प्रक्रिया- अपीलीय न्यायालय द्वारा कब हस्तक्षेप किया जाना चाहिए।

*अभिनिर्धारित किया गया* कि संशोधन की अनुमति देने में न्यायालयों का मार्गदर्शन करने वाले सिद्धांतों में से एक यह है कि सभी संशोधनों की अनुमति दी जा सकती है यदि विपरीत पक्ष को लागतों का पर्याप्त मुआवजा दिया जा सकता है, लेकिन यह सिद्धांत उस वादी के लिए कोई मदद नहीं करता है जहां दोष की मांग की गई है हटाया जाना मुकदमे के लिए घातक है और परिसीमा की अवधि समाप्त हो चुकी है। ऐसे मामले में संशोधन के लिए कोई भी लागत प्रतिवादी को उस स्थिति में नहीं ला सकती जिसमें वह संशोधन से पहले था। (पैरा 11)

*इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया* कि यदि मूल रूप से तय किया गया मुकदमा आंशिक छूट के लिए है और परिसीमा की अवधि समाप्त हो गई है, तो प्रतिशोधी को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त होता है क्योंकि ऐसा मुकदमा सफल नहीं हो सकता है और किसी भी संशोधन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, यदि इसका प्रभाव उसे छीनना है वह अधिकार जो विरोधी पक्ष को प्राप्त हुआ है। जहां वादपत्र का मसौदा तैयार करने वाले व्यक्ति की लापरवाही के कारण वादपत्र में त्रुटि उत्पन्न हुई हो, वहां संशोधन की अनुमति नहीं दी जाएगी। इस बात की जांच होनी चाहिए कि

क्या यह अनजाने में हुई गलती का मामला है या अनजाने में हुई चूक का मामला है।

(पैरा 9 और 10)

*इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया* कि संहिता के आदेश 6 नियम 7 के तहत वादपत्र में संशोधन करने का क्षेत्राधिकार न्यायालय में कुछ विवेकाधिकार निहित करता है और यदि प्रयोग किया गया विवेकाधिकार ठोस न्यायिक सिद्धांतों के अनुसार है, तो अपीलीय न्यायालय इसमें हस्तक्षेप करने के लिए बेहद अनिच्छुक होगा। यह केवल वहीं है जहां विवेक का प्रयोग मनमाना है और न्यायिक सिद्धांतों का उल्लंघन है, अपीलीय अदालत हस्तक्षेप कर सकती है और त्रुटि को सुधार सकती है। (पैरा 12)

*श्री एस.सी.गोयल, अपर जिला न्यायाधीश, कमल के न्यायालय के दिनांक 2 दिसम्बर के आदेश*

*से द्वितीय अपील,*1967, अतिरिक्त उप-न्यायाधीश, कमल, दिनांक 27 अप्रैल, 1965 को पलटते हुए, आदेश 41 नियम 23, सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत मुकदमे को निचली अदालत में भेज दिया।

50

*निर्देश है कि वादी अपीलकर्ता एक संशोधित वाद दायर करेगा ताकि इसमें शामिल किया जा सकेमुकदमा में कच्चा घर भी शामिल है और उसके बाद मुकदमा कानून के मुताबिक गुण-दोष के आधार पर चलाया जाएगा।*

*अपीलकर्ता के लिए टी.एस .एम उंजराल और एस.के पिपट, वकील।*

*वाई.पी गांधी, वकील, उत्तरदाताओं के लिए।*

## निर्णय

*न्यायमूर्ति* गुरदेव सिंह: –25 मई, 1964 के एक पंजीकृत विक्रय-पत्र के माध्यम से, शिंगारा सिंह प्रतिवादी संख्या 1; पखना गांव में स्थित अपनी 50 कनाल और 16 मरला जमीन और उसके साथ जुड़े सभी अधिकार और आबादी में स्थित एक कच्चा घर 7,620 रुपये में श्रीमती  गुरदीप कौर को बेच दिया। चूँकि सीमा 31 मई 1965, को समाप्त होने वाली थी? विक्रेता के बेटे केहर सिंह ने प्री-एम्प्शन के लिए एक मुकदमा लाया, जिसमें से यह अपील उत्पन्न हुई है। उन्होंने 6,620,रुपये के भुगतान पर श्रीमती गुरदीप कौर को बेची गई भूमि और विक्रय-पत्र में उल्लिखित अन्य सभी अधिकारों पर कब्ज़ा करने का दावा किया।  यह आरोप लगाते हुए कि भूमि का बाजार मूल्य इस राशि से अधिक नहीं था और विक्रय-पत्र (7,620 रुपये) में उद्धृत प्रतिफल को पूर्व-खाली करने वालों को दूर करने के लिए बढ़ा दिया गया था। यहां यह देखा जा सकता है कि जिस वादपत्र का मसौदा एक वकील ने तैयार किया था और जिस पर उनके हस्ताक्षर हैं, उसमें कच्चे मकान का कोई उल्लेख नहीं है।, जिसे विक्रय-पत्र में शामिल किया गया था, या तो अनुच्छेद संख्या 1 में, संपत्ति का विवरण निर्धारित करते समय, या प्रार्थना खंड में बनाया गया था जो इन शब्दों में है: -

"इसलिए यह प्रार्थना की जाती है कि वादी के पैराग्राफ संख्या 1 और विक्रय-पत्र में उल्लिखित प्री-एम्प्शन के अधिकार द्वारा भूमि के कब्जे के लिए एक डिक्री कृपया वादी के पक्ष में और प्रतिवादी के खिलाफ पारित की जाए। प्रतिवादी ने अन्य सभी अधिकारों के साथ, रुपये के भुगतान पर पंजीकृत विक्रय-पत्र दिनांक 25 मई, 1964 के माध्यम से बेच दिया। 6,620, मुकदमे की लागत के साथ वास्तव में भुगतान की गई राशि और वादी को कोई भी अतिरिक्त राहत दी जा सकती है जिसके लिए वह न्याय के हित में हकदार पाया जाता है।

(2) मुक़दमे का मुकाबला करते समय प्रतिवादी श्रीमती गुरदीप कौर ने अन्य बातों के साथ-साथ निवेदन किया कि आबादी में स्थित कच्चा घर, जो बेची गई संपत्ति का हिस्सा था, को प्री-एम्प्शन के वाद में शामिल नहीं किया गया था, इसलिए मुक़दमा खारिज किया जा सकता है। क्योंकि आंशिक प्री-एम्प्शन की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस याचिका ने एक अलग मुद्दे का विषय बनाया (यह मुद्दा संख्या 5 है) जो 16 सितंबर, 1965 को उठाया गया था, और निम्नानुसार चलता है: -

"क्या मुकदमा आंशिक प्री-एम्प्शन के लिए बुरा है।"

(3) दोनों मुकदमों की सुनवाई आगे बढ़ी और जब तक साक्ष्य की जांच की जा रही थी, 24 फरवरी, 1966 को प्री-एम्प्टर ने वाद में संशोधन के लिए अदालत में आवेदन किया ताकि गांव की आबादी में स्थित कच्चे घर को राहत खंड और पैराग्राफ 1 दोनों में शामिल किया जा सके। वादी का. यह आवेदन, जो कि मुकदमा दायर करने की सीमा अवधि समाप्त होने के लंबे समय बाद किया गया था,प्रतिवादी-प्रतिशोधी द्वारा जोरदार विरोध किया गया था और मामले पर उचित विचार करने के बाद, विद्वान परीक्षण न्यायाधीश ने 22 मार्च 1966 के अपने आदेश द्वारा संशोधन को अस्वीकार कर दिया। मुख्य रूप से इस आधार पर कि चूंकि परिसीमा की अवधि समाप्त हो गई थी, प्रतिशोधी को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त हुआ था और वादी को अपने वादपत्र में एक नई प्रार्थना शामिल करने की अनुमति देना उचित नहीं था। इस आदेश को पुनरीक्षण के माध्यम से इस न्यायालय में चुनौती देने का कोई प्रयास नहीं किया गया और मुकदमे को गुण-दोष के आधार पर निर्धारण के लिए आगे बढ़ने की अनुमति दी गई। सुनवाई के बाद, विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने इसे पूरी तरह से इस निष्कर्ष पर खारिज कर दिया कि यह आंशिक पूर्व-भुगतान के लिए था, विक्रय-पत्र में बताए गए कच्चे घर को छोड़ दिया गया था। 27 अप्रैल, 1966 को अतिरिक्त अधीनस्थ न्यायाधीश के इस डिक्री के खिलाफ, प्रवर्तक ने जिला न्यायाधीश की अदालत में अपील की। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि यद्यपि मुकदमा पूरी तरह से इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि यह आंशिक प्री-एम्प्शन के लिए था और इससे पहले ट्रायल कोर्ट ने वादी के संशोधन के लिए आवेदन को अस्वीकार कर दिया था ताकि कच्चे घर की स्थिति को आबादी में शामिल किया जा सके। जिला न्यायालय में दायर अपील के दौरान इस तथ्य की कोई शिकायत नहीं की गई कि संशोधन के लिए आवेदन को गलत तरीके से अस्वीकार कर दिया गया था। अपील के लंबित रहने के दौरान ही प्री-एम्प्टर या उसके वकील अचानक जाग गए और उन्हें एहसास हुआ कि वादपत्र में संशोधन के बिना मुकदमा विफल हो जाना चाहिए। इस बार अपीलीय न्यायालय में वादपत्र में संशोधन के लिए एक नया आवेदन देकर इस जोखिम को दूर करने की मांग की गई थी। इस आवेदन में, जिसे 20 नवंबर, 1967 को अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को प्रस्तुत किया गया था, जिसके समक्ष अपील तब लंबित थी, अनजाने में हुई चूक की दलील पर वादपत्र में संशोधन की प्रार्थना को उचित ठहराने की मांग की गई थी। उस आवेदन के पैराग्राफ 2 में कहा गया था:-

"असावधानी के कारण जिस कच्चे मकान को बेचने का आरोप लगाया गया है, - 26 मई, 1964 के विक्रय-पत्र के माध्यम से, उसका उल्लेख वादी में नहीं किया गया था, हालांकि वादी ने मुकदमे में भूमि से जुड़े सभी अधिकारों के लिए मुकदमा दायर किया था, जैसा कि विक्रय-पत्र में उल्लिखित है, लेकिन वादी ने कच्चे घर का उल्लेख नहीं किया है, जिसे विशेष रूप से विवादग्रस्त भूमि के साथ आवंटित किया गया था।

(4) इस आवेदन पर तब सुनवाई हुई जब अपील गुण-दोष के आधार पर सुनवाई के लिए आई। विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने अपने आदेश दिनांक 2 दिसंबर, 1967 द्वारा अपील को स्वीकार कर लिया, ट्रायल कोर्ट को संशोधन की अनुमति देने का निर्देश दिया और मुकदमे की सुनवाई को आगे बढ़ाने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 23 के तहत मामले को वापस भेज दिया। वादपत्र में संशोधन के बाद कानून के अनुसार गुण-दोष के आधार पर। यह निचली अपीलीय अदालत के 2 दिसंबर, 1967 के इस आदेश के विरुद्ध है कि प्रतिवादी श्रीमती गुरदीप कौर अपील में आई हैं.

(5) विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने आंशिक प्री-एम्प्शन से संबंधित मुद्दे संख्या 5 पर ट्रायल कोर्ट के निष्कर्ष को उलट कर अपील स्वीकार कर ली है, जिसे पहले पुन: प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने ट्रायल कोर्ट द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण की सत्यता पर संदेह नहीं किया है कि यदि मुकदमा बेची गई संपत्ति के

50

आंशिक प्री-एम्पशन के लिए है तो यह खारिज करने योग्य है। उन्होंने वाद संख्या 5 में संशोधन की अनुमति देकर निष्कर्ष को उलट दिया है। उनके फैसले से पता चलता है कि उनका ध्यान ट्रायल कोर्ट के उस आदेश की ओर नहीं गया जिसके द्वारा उस कोर्ट में किए गए संशोधन के आवेदन को खारिज कर दिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने 20 नवंबर, 1967 को उनके समक्ष दायर संशोधन आवेदन में दिए गए कथन के आधार पर वादपत्र में संशोधन के लिए प्रार्थना स्वीकार कर ली है, जिसमें, जैसा कि पहले देखा गया था, यह कहा गया था कि यह था अनजाने में कच्चा मकान मुकदमे में शामिल नहीं किया गया। अपीलकर्ता की ओर से पेश हुए एस. तीरथ सिंह मुंजराल ने जोरदार तर्क दिया कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने प्रीएम्प्टर के लिए एक नया मामला बनाया था, जिसे ट्रायल कोर्ट में उनके द्वारा दायर भी नहीं किया गया था और संशोधन की अनुमति देकर अपीलकर्ता को एक बहुत ही मूल्यवान अधिकार से वंचित कर दिया गया था। प्रीएम्प्टर द्वारा मांगी गई राहत की सीमा अवधि बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी थी। उनका तर्क है कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने संशोधन के प्रश्न को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों के विपरीत कार्य किया और परीक्षण के दौरान मांगे गए संशोधन को अस्वीकार करने में ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रयोग किए गए विवेक में हस्तक्षेप करना उचित नहीं था।

(6) प्रतिवादी-प्री-एम्प्टर की ओर से पेश हुए श्री गांधी ने वाद में संशोधन की अनुमति देने वाले निचली अपीलीय अदालत के आदेश का बचाव करने का प्रयास किया है, इस दलील पर कि संशोधन केवल औपचारिक था क्योंकि वादपत्र में विशेष रूप से कहा गया था कि मुकदमा न केवल केवल भूमि के लिए ही नहीं, बल्कि उससे जुड़े सभी अधिकारों के लिए भी और किसी भी मामले में संशोधन को उचित रूप से अनुमति दी गई थी क्योंकि यह अनजाने में हुई चूक या गलती के कारण हुआ था।

कि कच्चा घर उस संपत्ति में शामिल नहीं था जिसके लिए प्री-एम्पशन की राहत मांगी गई थी। अपने तर्क के समर्थन में उन्होंने जलाल दीन और अन्य बनाम क़ैम दीन और अन्य (1) मामले में पंजाब मुख्य न्यायालय के फैसले पर पूरी तरह भरोसा किया है। यह वही प्राधिकारी है जिससे विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने अपनी राय के लिए समर्थन मांगा है कि वादपत्र में संशोधन की अनुमति दी जानी चाहिए। उस मामले के तथ्यों से पता चलता है कि बेची गई संपत्ति में 41 कनाल 18 मरला जमीन, एक घर की दूसरी मंजिल, एक कुएं में हिस्सा और शमिलत का हिस्सा शामिल था। प्री-एम्पशन के मुकदमे में, संपत्ति को केवल 41 कनाल 18 मरला के रूप में वर्णित किया गया था और मुकदमे के लिए निर्धारित सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद इस दलील पर वाद में संशोधन करने के लिए एक आवेदन किया गया था कि वादी का त्याग करने का इरादा नहीं था। दावे का कोई भी हिस्सा, लेकिन किताबी घलू (लिपिकीय त्रुटि) के कारण घर में छोड़ दिया गया। न्यायालय ने उस संशोधन की अनुमति दी जो दावा की गई संपत्ति में घर को शामिल करके विधिवत किया गया था। फिर भी कुएँ और शामिलात में हिस्सा छूट गया। प्रतिवादी के वकील द्वारा इसे न्यायालय के संज्ञान में लाए जाने के बाद वादपत्र को संशोधन के लिए वापस कर दिया गया और दोष का निवारण किया गया। यह मानते हुए कि संशोधन को उचित रूप से अनुमति दी गई थी, *न्यायमूर्ति* जॉनस्टोन, जिन्होंने न्यायालय का निर्णय सुनाया; इस प्रकार देखा गया:-

> "हमारी राय में सब कुछ इस निष्कर्ष की ओर इशारा करता है कि हमारे यहां केवल असावधानी और दावा की गई संपत्ति के गलत विवरण का मामला है।"

(7) सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6 के नियम 17 का हवाला देते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने कहा; "निश्चित रूप से नियम 17 वाद-पत्र के किसी भी हिस्से में संशोधन की अनुमति देता है, बशर्ते कि संशोधन मुकदमे के चरित्र को नहीं बदलता है या कार्रवाई का एक अलग कारण प्रस्तुत नहीं करता है।" फिर जसमीर सिंह बनाम रहमतुल्ला (2) में उस न्यायालय के पहले के फैसले का संदर्भ दिया गया, और यह बताया गया कि उस मामले में जो निर्धारित किया गया था वह यह था कि परीक्षण यह था कि क्या जोड़े जाने वाले मामले को मूल प्रार्थना जानबूझकर बाहर रखा गया था

(8) पंजाब मुख्य न्यायालय का यह निर्णय गुलजार सिंह और अन्य बनाम गुरबक्स सिंह और अन्य (3) मामले में *न्यायमूर्ति* दुआ, के समक्ष विचार के लिए आया, जो एक आपत्ति के बाद प्री-एम्पशन

सूट में वादी के संशोधन का मामला भी लिया गया था कि

(1) *62 पी.आर 1914.*
(2) *7 पी.आर 1896.*
(3) *1964 के सी.आर 833 का निर्णय 5 मार्च 1965 को हुआ।*

आंशिक प्री-एम्प्शन के लिए मुकदमा ख़राब था। विद्वान न्यायाधीश ने जलाल दीन के मामले को अलग करते हुए (1) (सुप्रा) कहा-

"जलाल दीन के मामले में, प्री-एम्प्शन के मुकदमे में संशोधन की अनुमति अनजाने में बेची गई कुछ संपत्ति को शामिल करने की अनुमति देकर दी गई थी, यह पता चलने पर कि यह दावा की गई संपत्ति की असावधानी और गलत विवरण का मामला था, न कि जानबूझकर चूक का।"

न्यायमूर्ति दुआ, ने पीरगोंडा होंगोंडा पाटिल बनाम कलगोंडा शिदगोंडा पाटिल, आदि (4) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित सिद्धांतों का पालन किया, जिसमें किशनदास रूप चंद बनाम रचप्पे विठोबा (5) में न्यायमूर्ति बैचलर, की टिप्पणियां शामिल थीं। अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया था कि सभी संशोधनों को अनुमति दी जानी चाहिए जो दो शर्तों को पूरा करते हैं (ए) दूसरे पक्ष के साथ अन्याय नहीं करना, और (बी) पार्टीज़ में विवाद में वास्तविक प्रश्नों को निर्धारित करने के उद्देश्य से आवश्यक होना। इन सिद्धांतों पर संशोधन के प्रश्न से निपटते हुए, न्यायमूर्ति दुआ, ने इस प्रकार कहा: -

"मेसर्स गोक्स एंड किंग्स एजेंट्स लिमिटेड बनाम मेसर्स फीनिक्स ऑयल कंपनी (इंडिया) लिमिटेड (6) में न्यायमूर्ति कपूर, के फैसले का हवाला इस तर्क के समर्थन में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश के समक्ष दिया गया था कि वादी ऐसा नहीं कर सकता। उसे अपनी याचिका में संशोधन करने की अनुमति दी जानी चाहिए यदि संशोधन का प्रभाव प्रतिवादी से वह कानूनी अधिकार छीनना होगा जो समय बीतने के कारण उसे प्राप्त हुआ है, लेकिन कुछ हद तक आश्चर्यजनक रूप से, विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश, अनुपात के बल को स्वीकार करते हुए, वर्तमान मामले को उद्धृत सिद्धांत से बाहर निकालने में कामयाब रहे, यह देखते हुए कि मामला केवल लापरवाही और असावधानी का मामला था, वादी के वकील ने विक्रय-पत्र से परामर्श किए बिना, वादी का मसौदा तैयार किया था। विद्वान न्यायाधीश द्वारा किए गए भेद की सराहना करना आसान नहीं है। यदि प्रतिवादी ने सीमा की समाप्ति के कारण निहित अधिकार प्राप्त कर लिया है और वादी केवल पूर्व-मुक्ति के आक्रामक अधिकार का दावा कर रहा है, तो मुझे नहीं लगता कि, उच्चतम न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत के अनुरूप, कोई भी वादी द्वारा संशोधन की अनुमति देने का मामला बनाया गया था। आदेश

(4) *ए.आई.आर 1957 एस.सी 363।*
(5) *आई.एल.आर 33 बम. 644.*
(6) *1954 पी.एल.आर 237.*

मेरी राय में, निचली अदालत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में स्पष्ट रूप से भौतिक अनियमितता और अवैधता से प्रभावित है।"

(9) मैं इन टिप्पणियों से आदरपूर्वक सहमत हूं। श्री गांधी ने यह बताकर इस मामले को अलग करने की कोशिश की है कि न्यायमूर्ति दुआ, एक ऐसे मामले से निपट रहे थे जिसमें मुकदमा एक-चौथाई भूमि के लिए था, न कि पूरी भूमि के लिए और यह इस स्थिति में था कि विद्वान न्यायाधीश यह माना गया कि यह अनजाने में हुई गलती का मामला नहीं है, बल्कि विक्रय-पत्र के तहत कवर की गई संपत्ति के एक हिस्से को जानबूझकर छोड़ने का मामला है। इसमें कोई संदेह नहीं है, लेकिन ऊपर उद्धृत टिप्पणियाँ उन सिद्धांतों को अभिनिर्धारित करती हैं जिनके आधार पर संशोधन के प्रश्न निर्धारित किए जाने हैं। उन टिप्पणियों से यह स्पष्ट है कि विद्वान न्यायाधीश उस संशोधन की अनुमति देने के लिए तैयार नहीं थे जहां

वादपत्र में त्रुटि वादपत्र तैयार करने वाले व्यक्ति की लापरवाही के कारण उत्पन्न हुई है।

(10) नियमों में संशोधन के प्रश्नों में न्यायालयों को जिन सिद्धांतों का मार्गदर्शन करना चाहिए, उन्हें सर्वोच्च न्यायालय के आधिपत्य द्वारा हाल ही में एके गुप्ता एंड संस लिमिटेड बनाम दामोदर वैली कॉर्पोरेशन (7) में दोहराया गया है। इन सिद्धांतों में यह है कि किसी भी संशोधन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए यदि इसका प्रभाव विपरीत पक्ष को प्राप्त मूल्यवान अधिकार को छीनने के लिए हो। यह स्पष्ट है कि यदि वादी का मुकदमा मूल रूप से आंशिक प्री-एम्पशन के लिए है और सीमा की अवधि समाप्त हो गई है, तो प्रतिशोधी को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त हुआ है क्योंकि यह विवादित नहीं है कि आंशिक प्री-एम्प्शन का मुकदमा सफल नहीं हो सकता है जो मामला हाथ में है वह उस मामले से कहीं अधिक मजबूत स्थिति में है जिसके साथ न्यायमूर्ति दुआ, निपट रहे थे और भले ही हम जलाल दीन के मामले (1) में मुख्य न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा निर्धारित परीक्षण को स्वीकार करते हैं, (सुप्रा) मैं हूं उनकी राय है कि इस मामले में संशोधन की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए थी इस संबंध में यह जांच की जानी चाहिए कि क्या यह अनजाने में हुई गलती या चूक का मामला था। प्रासंगिक तथ्य यह है कि विक्रय -पत्र में, वादपत्र में उल्लिखित भूमि के अलावा, कच्चे घर का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है और यह कहा गया है कि यह आबादी में स्थित था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि घर स्वयं भूमि पर नहीं था और इसे उस भूमि का उपांग या भूमि का सही अनुलग्नक नहीं माना जा सकता है। यह एक अलग और विशिष्ट संपत्ति है वादपत्र के पैराग्राफ 1 में इस घर का कोई उल्लेख नहीं किया गया है और प्रार्थना खंड (पैराग्राफ 9) में केवल वादपत्र में उल्लिखित विशेष रूप से भूमि के संबंध में राहत मांगी गई है। मुक़दमे की पहली सुनवाई में जब लिखित बयान डाला गया

(7) *ए.आई.आर 11967 एस.एस.सी. 96*

तुरंत एक आपत्ति ली गई कि मुकदमा आंशिक छूट के लिए था क्योंकि कच्चे घर को दावा की गई संपत्ति में शामिल नहीं किया गया था। यदि वादपत्र का मसौदा तैयार करने में कोई अनजाने में चूक या गलती हो गई थी, तो वादी और उसके वकील से अपेक्षा की जाती थी कि वे तुरंत वादपत्र में संशोधन करने के लिए न्यायालय की अनुमति लें और अनजाने में हुई गलती या चूक की दलील पेश करें। हालाँकि, वादी ने ऐसा कोई रास्ता नहीं अपनाया। इसके विपरीत, वे मुद्दे पर मुद्दे से जुड़ गए जिसके परिणामस्वरूप गुण-दोष के मुद्दों के साथ-साथ एक विशिष्ट मुद्दा तैयार किया गया। बाद में मुकदमे के दौरान जब साक्ष्य आगे बढ़ रहा था तभी संशोधन के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। मजे की बात यह है कि उस आवेदन में यह दावा नहीं किया गया था कि संपत्ति के विवरण में गलती अनजाने में हुई गलती के कारण हुई है। वास्तव में यह खुलासा करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि घरेलू संपत्ति का जिक्र वादपत्र में कैसे छोड़ दिया गया और इसके संबंध में कोई राहत नहीं मांगी गई। दूसरी ओर, संशोधन की प्रार्थना के संबंध में जो कहा गया वह यह था कि घर-संपत्ति का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया था और न्याय के हित में वादपत्र में संशोधन की अनुमति दी जानी चाहिए। जैसा कि पहले देखा गया है, विद्वान ट्रायल न्यायाधीश ने इस प्रार्थना को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि संशोधन के लिए आवेदन देर से किया गया था और यदि संशोधन की अनुमति दी गई तो यह विपरीत पक्ष को मिला एक मूल्यवान अधिकार छीन लेगा। उसके बाद भी इस आदेश की सत्यता को चुनौती नहीं दी गई और जिला न्यायालय में अपील के आधार पर भी कोई शिकायत नहीं की गई कि संशोधन को गलत तरीके से अस्वीकार कर दिया गया था। अपील के ज्ञापन में यह भी नहीं कहा गया कि कच्चे मकान को वाद-विवाद में शामिल करना किसी भूल के कारण हुआ है। इन परिस्थितियों में जब वादी ने आंशिक प्री-एम्प्शन के संबंध में मुद्दे को लगातार चुनौती दी थी और यह भी आरोप नहीं लगाया था कि गलती अनजाने में या अनजाने में हुई थी, उसकी बाद की दलील जिसे निचली अपीलीय अदालत ने स्वीकार कर लिया है कि गलती अनजाने में हुई थी। अस्थिर, असमर्थनीय। यह फिर महत्वपूर्ण है कि निचली अपीलीय अदालत में संशोधन के लिए दिए गए आवेदन में भी यह नहीं बताया गया है कि गलती कैसे हुई और किसने की। वादी का मसौदा एक वकील द्वारा तैयार किया गया था। यह उनके द्वारा हस्ताक्षरित है और वह यह बताने के लिए आगे नहीं आए हैं कि घर को उस संपत्ति में शामिल क्यों नहीं किया गया जिसके संबंध में छूट के अधिकार का दावा किया गया था।

(11) यह सच है कि संशोधन की अनुमति देने में उनके न्यायालयों का मार्गदर्शन करने वाले सिद्धांतों में

से एक यह है कि सभी संशोधनों की अनुमति दी जा सकती है यदि विपरीत पक्ष को लागतों से पर्याप्त मुआवजा दिया जा सकता है, लेकिन इस मामले में यह सिद्धांत वादी के लिए कोई मदद नहीं करता है क्योंकि संशोधन की अनुमति देने से वादी को कोई मदद नहीं मिलती है। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश मुक़दमे को ख़ारिज करने से रोका था। संशोधन के लिए कोई भी लागत प्रतिवादी को उस स्थिति में नहीं रख सकती थी जिसमें वह संशोधन की अनुमति देने से पहले थी क्योंकि ट्रायल कोर्ट के फैसले के अनुसार आंशिक प्री-एम्प्शन के कारण मुकदमा विफल होना चाहिए।

(12) वहां के अपर जिला न्यायाधीश के आदेश में संशोधन को एक और दोष से ग्रस्त किया गया है। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6, नियम 17 के तहत वादपत्र में संशोधन करने का अधिकार क्षेत्र ट्रायल कोर्ट को कुछ विवेकाधिकार प्रदान करता है। इस मामले में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा अपीलकर्ता के विरुद्ध विवेक का प्रयोग किया गया था। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यदि विवेक का प्रयोग ठोस न्यायिक सिद्धांतों के अनुसार किया जाता है तो अपीलीय अदालत इसमें हस्तक्षेप करने के लिए बेहद अनिच्छुक होगी। यह केवल वहीं है जहां विवेक का प्रयोग मनमाना है और न्यायिक सिद्धांतों का उल्लंघन है कि अपीलीय अदालत हस्तक्षेप कर सकती है और त्रुटि को सुधार सकती है। इस मामले में वादी द्वारा दायर संशोधन के आवेदन को खारिज करते हुए ट्रायल कोर्ट द्वारा दिया गया आदेश ऐसी किसी त्रुटि से ग्रस्त नहीं है। जिन सिद्धांतों पर वह आदेश आगे बढ़ता है, वे असाधारण हैं और विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने यह नहीं पाया कि संशोधन के लिए पहले आवेदन में बताए गए तथ्यों के आधार पर, जो ट्रायल कोर्ट में दायर किया गया था, वादपत्र में संशोधन करने के विवेक के प्रयोग के लिए कोई भी मामला बाहर किया गया था उन्होंने वादी द्वारा अपीलीय न्यायालय के समक्ष किए गए संशोधन के दूसरे आवेदन में दिए गए कथन के आधार पर संशोधन की अनुमति दी है और जिसमें पहली बार कहा गया था कि गलती अनजाने में हुई थी। चूंकि यह याचिका स्पष्ट रूप से बाद में सोची गई दलील थी, इसलिए विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को इसे हल्के-फुल्के अंदाज में स्वीकार नहीं करना चाहिए था। वास्तव में इस याचिका को स्वीकार करते समय उन्होंने मुकदमे के इतिहास या यहां तक कि ■'संशोधन के लिए पहले के आवेदन और उस पर ट्रायल कोर्ट के आदेश का भी जिक्र नहीं किया है।

(13) इन सभी कारणों से, मेरी राय है कि वादपत्र में संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस निष्कर्ष के मद्देनजर यह स्पष्ट है कि वादी का मुकदमा, आंशिक प्री-एम्प्शन के लिए होने के कारण, जैसा कि ट्रायल कोर्ट ने माना था, खारिज किया जाना था।

(14) श्री गांधी ने बताया है कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने यह राय व्यक्त नहीं की है कि यदि मुकदमा आंशिक रूप से छूट के लिए था तो क्या मुकदमा खारिज किया जा सकता था और इस मामले का निर्धारण करने के लिए मामले को निचली अपीलीय अदालत में भेजना आवश्यक हो सकता है। जो प्रश्न उठाया गया है वह कानून का है। श्री गांधी ने आगे तर्क दिया है कि संशोधन के बिना भी

वाद को आंशिक प्री-एम्प्शन में से एक नहीं माना जा सकता है और प्री-एम्प्शन की जाने वाली संपत्ति के बीच कच्चे घर का विशेष रूप से उल्लेख करना वादी के लिए आवश्यक या अनिवार्य नहीं था। इस तर्क के समर्थन में वह इस तथ्य पर भरोसा करते हैं कि विक्रय पत्र में घर का कोई अलग मूल्य नहीं बताया गया है और घर वादी के पिता को उसी आदेश से आवंटित किया गया था जिसके तहत उन्हें विवादित भूमि मिली थी। विक्रय-पत्र का अध्ययन करने के बाद मैं स्वयं को इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ पाता हूँ। विक्रय-पत्र में भूमि और मकान का अलग-अलग वर्णन किया गया है। यह घर कृषि भूमि के किसी हिस्से में नहीं बल्कि आबादी में स्थित है। केवल यह तथ्य कि संपत्ति की दोनों वस्तुएं वादी के पिता को एक ही आदेश द्वारा आवंटित की गई थीं, इस धारणा की गारंटी नहीं देता है कि वे एक संपत्ति का गठन करते हैं और जो कोई भी जमीन लेता है वह इसके साथ घर भी ले जाता है। तथ्य यह है कि भूमि और घर का मूल्य विक्रय-पत्र में अलग से निर्दिष्ट नहीं है, यह भी मामले में आंशिक पूर्व-खाली के नियम को लागू होने से नहीं रोकता है। अक्सर संपत्ति की एक से अधिक वस्तुओं को उनके अलग-अलग मूल्यों को निर्दिष्ट किए बिना एक ही विक्रय-पत्र द्वारा बेचा जाता है। यदि किसी मामले में बिक्री-विलेख में दो अलग-अलग संपत्तियां शामिल हैं और दोनों अलग-अलग इलाकों में स्थित हैं और अलग-अलग प्रकार

की हैं, तो केवल इसलिए यह तर्क देना व्यर्थ होगा कि उनमें से प्रत्येक का अलग-अलग मूल्य बिक्री में नहीं बताया गया है। -जब प्री-एम्पशन का अधिकार सभी पर लागू होता है तो प्री-एम्प्टर एक को प्री-एम्प्ट करने और दूसरे को बाहर करने के लिए स्वतंत्र होता है। मेरे समक्ष इस बिंदु पर कोई अधिकार उद्धृत नहीं किया गया है और मेरी राय है कि ऐसे मामले में भी मुकदमे को आंशिक छूट के लिए एक माना जाना चाहिए।

(15) चूंकि वाद संख्या 5 पर अपने निष्कर्ष पर मुकदमा विफल होना चाहिए, इसलिए मामले को निचली अपीलीय अदालत में वापस भेजने का कोई अवसर नहीं है। तदनुसार, मैं अपील स्वीकार करता हूं, विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के आदेश को रद्द करता हूं और ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री की पुष्टि करता हूं। मामले की परिस्थितियों में मैं पार्टियों को अपनी लागत स्वयं वहन करने के लिए छोड़ता हूं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

ममता,
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
रोहतक, हरियाणा।